(ईचलकरंजी में दिया गया वक्तव्य)

मेरे अनन्य और स्नेही मित्र और गौरव महिमा मंडित मुंबई उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति श्री भंडारीजी, श्रीमती भंडारी, आदरणीय श्री मालूजी, मरदाजी, चांडकजी, सभा भवन में आसीन महेश्वरी समाज के मनीषी महानुभाव, ईचलकरंजी के अत्यंत आदरणीय नागरिक महानुभाव, आदरणीय देवियों, मित्रगण और चूंकि मुझे अभी घर भी लौटकर जाना है इसलिए आज संबोधित कर रहा हूं मंच पर आसीन श्रीमती लाहोटी। वजह यह है कि नज़रें बता रही हैं कि नज़ारे कुछ और हैं। समाज में अनेक आयोजनों में जाने का अवसर मिलता है श्रीमती लाहोटी अक्सर मेरे सामने बैठी होती हैं और हम लोग आंखों आंखों में एक दूसरे को देखते रहते हैं। किंतु आज ईचलकरंजी समारोह में पहला अवसर है कि उन्हें मेरे सामने नहीं मेरे पास में बैठाया गया है। आपने देखा होगा कि मैं उनसे बीच–बीच में अशिष्टता कर रहा था। मैं उनसे सिर्फ इतना पूछ रहा था कि डॉ एस. पी. मरदा साहब हमारे समधी ज़रूर हैं किंतु क्या आपने उन्हें इतनी छूट दी है कि वे आपको यहां लाकर बैठा दें और आंखों से आंखें मिलाने की बजाय पंजे लड़ाने की इजाज़त दें।

न्यायमूर्ति श्री भंडारी और श्रीमती भंडारी हमारे बीच उपस्थित हैं। ये सहज सहयोग है। आज ईचलकरंजी में नवनिर्मित भवन के शुभारंभ का अवसर था। साधारणतः किसी भी प्रदेश में जिला स्तर पर यदि किसी न्यायिक भवन की स्थापना होती है या ऐसी कोई शुभ घटना घटित होती है तो शुभारंभ करना प्रदेश के मुख्य न्यायाधिपति का विशेष प्राधिकार है। किंतु डॉ. एस.पी. मरदा साहब का पूर्वाग्रह था कि मेरे मुख्य न्यायाधिपति के कार्यकाल में एक बार अवश्य ईचलकरंजी आऊं। यहां के समाज के अन्य महानुभावों का भी आग्रह था और मैं एक उचित अवसर की तलाश में था पता नहीं मुख्य न्यायाधिपति श्री भंडारी साहब को इस बात का आभास या संकेत कैस मिल गया। उन्होंने आग्रह किया कि यहां के न्यायालय भवन का शुभारंभ करना होगा। मैं किसी बहाने की तलाश में था, मिल गया। मैंने स्वीकार कर लिया और आज डॉ. मरदा साहब तो पृष्ठ भूमि में हैं, सामने मुख्य न्यायाधिपति श्री न्यायमूर्ति भंडारी साहब हैं, उन्हीं की कृपा से मैं आज आपके बीच उपस्थित हूं। जब उनका ज़िक्र आया और आप सब अपने हैं, परिवार के सदस्य हैं तो एक दो बात मैं उनके बारे में बताना चाहता हूं। क्योंकि मेरा उनका रिश्ता कुछ और है और मुझे उनके अंदर तक की ख़बर है। उनके परिचय में जो बातें मैडम सप्रे ने कही उसमें एक दो बातें और नहीं कह सकती थी क्योंकि उन्हें इस बात की जानकारी नहीं वो सिर्फ मेरी जानकारी में है। एक तो ये कि न्यायमूर्ति श्री भंडारी साहब जोधपुर के हैं और न्यायमूर्ति श्री भंडारी और श्रीमती भंडारी श्री लाहोटी और श्रीमती लाहोटी के बीच झगडे का अक्सर कारण बनते है। भंडारी साहब जोधपुर के हैं, श्रीमती लाहोटी भी जोधपुर की है। हमेशा उनका पक्ष लेती हैं और मैं मध्यप्रदेश का हूं, श्रीमती भंडारी भी मध्य प्रदेश की हैं। वे दोनों एक दूसरे से बढ़कर हैं और जब हम अपने परस्पर विवाद में एक–एक का सहारा ले लेते हैं तो ये तय

करना मुश्किल हो जाता है कि कौन जीतेगा। एक बात और, आप न्यायमूर्ति श्री भंडारी को मेरी नज़र से देखिये। गांधीजी का जन्म हुआ 2 अक्टूबर को और श्री दलवीर भंडारी जी पृथ्वी पर अवतरित हुए 1 अक्टूबर को। 24 घंटे पहले और मैंने उनको बहुत अच्छी तरह देखा है। गांधीजी का सिद्धांत यह था कि कोई उनके गाल पर तमाचा मारे तो वो दूसरा भी गाल आगे कर देते थे कि इस पर भी मार लो। पर भंडारीजी गांधीजी से एक क़दम आगे कैसे है? मै अक्सर उनसे कहता रहता हूं इसलिये आप से भी कह रहा हूं और ऐसी कोई बात नहीं जो उनके पीठ पीछे कह रहा हूं। गांधीजी से एक क़दम आगे मैं इसलिए मानता हूं कि यदि कोई उनके दायें गाल गाल पर एक चपत लगाये तो वे बायें गाल पर वो खुद ही चपत लगा लेते हैं क्योंकि चपत लगाने वाले को चपत लगाने में कष्ट होगा।

मेरा परिचय देते हुए बताया गया कि 1994 में मेरा स्थानांतरण मध्य प्रदेश से दिल्ली हुआ। श्री भंडारी दिल्ली में उस समय न्यायाधीश के रूप में पदस्थ थे। उन्होंने खुली बाहों से मेरा स्वागत किया। मेरा उनसे थोडा सा परिचय पहले से था। अब गुना जैसे छोटे नगर में रहने वाला ग्वालियर जैसे छोटे उच्च न्यायालय में वकालत करने वाला व्यक्ति जब न्यायाधीश होकर भारतवर्ष की राजधानी जो सम्पन्नता और राजनीति का गढ़ माना जाती है जब वहां पहुंचे तो स्वाभाविक रूप से मैं अपने आपको बहुत बौना महसूस करता था किंतु उन्होंने मुझे आश्रय दिया और मैं अक्सर बड़े गर्व से कहा करता था कि श्री दलवीर भंडारी मेरे लोकल गॉर्जियन हैं। मेरे स्थानीय संरक्षक हैं। उन्होंने इस कर्त्तव्य का निर्वहण किया और यही कारण है कि जब उन्होंने मुझे यह कहा कि ईचलकरंजी में आपको आकर न्यायालय भवन का उद्घाटन करना है तो मैं इनकार नहीं कर सका इसलिए आप यकीन मानिये कि डॉ. एस.पी. मर्दा साहब की प्रेरणा ज़रूर है किंतु आज मेरा इस सभा भवन में उपस्थिति का मूल कारण जो है वो न्यायमूर्ति श्री भंडारी और श्रीमती भंडारी हैं।

आपने देखा होगा कि मैंने एक अशिष्टता और की है। मैं कुछ कहूं इससे पहले जो त्रुटियां हुई हैं उनकी क्षमा मांग लेना अच्छा है। आपने बड़े प्रेम से मेरे सर पर साफा बांधा और मैंने उसे अभी कुछ देर बांधा और फिर उतार दिया। मैं हर घटना से कुछ न कुछ सीखता हूं और कुछ न कुछ सबक लेता हूं कि ये मेरी ग़लती है। आपने साफा बांधा मुझे सम्मान देने के लिये। मैंने इसमें से कुछ सूत्र ग्रहण किये। वकील का काम यह होता है कि जी चाहे जितना बोलता रहे। कोर्ट में बहस करता है। अपने तर्क प्रस्तुत करता है। खूब बोलता है। जब यही वकील न्यायाधीश बन जाता है तो उसे पहला पाठ यह पढ़ाया जाता है कि अपना मुंह बंद रखो और कान खुले रखो। **Hear patiently and decide wisely**। ये हमें मूल मंत्र सिखाया जाता है तो हम लोग अपना ज़ुबान बंद रखते हैं और कान खुले रखते हैं। आज समाज के आदरणीय महानुभावों और आयोजकों को लगा कि इनकी ज़ुबान खुलवानी है तो सबसे पहले इनके कान बंद करो।

कान इतने कसके बांधो कि चश्मा भी उतर जाये तो आंखें भी बंद, कान भी बंद सिर्फ जुबान खुली रहेगी। मैं भी आखिरकार भारतवर्ष के उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश हूं, थोडी सी बुद्धि अपने साथ लेकर चलता हूं। मैंने कहा यदि आंखें और कान दोनों ही बंद हो गये तो बोलने के लिये फिर बचेगा क्या। इसलिए कुछ ऐसा प्रयास किया जाये कि आप की चेष्टा के बाद भी मेरे कान और आँखें खुली रहे। मैं आपके सामने अपने संक्षिप्त विचार अपनी आँखें और कान दोनों खुली रखकर करूँगा जैसे ही मुझे संकेत मिलेगा कि मुझे सुनते सुनते आप थक गए हैं मैं अपनी वाणी को विराम दूंगा।

आपके बीच आकर मुझे बहुत सात्विक आनन्द की अनुभूति हो रही है। आप समाज के बुजुर्ग हैं। सामाजिक सेवा के कार्यों में रूचि लेते हैं और इसलिए आप सहज पुण्य का अर्जन करते हैं। परमेश्वर की कृपा से आपके हाथों में वो शक्ति है और आपकी वाणी इतनी बलवती है कि आप जिसे चाहें उसे आशीषित कर सकते हैं। भारतवर्ष की न्यायपालिका के सामने गंभीर चुनौतियां हैं और इन चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए हमें शक्ति चाहिए। ऐसी शक्ति मुझे आप जैसे मनीषी महानुभावों के बीच आकर मिलती है और आपका आशीष पाने का लोभ मैं संवरण नहीं कर पाता और इसीलिए आपके बीच उपस्थित हो जाता हूं।

अभी मैडम सप्रे ने, आदरणीय श्री मरदाजी ने और अन्य पूर्व वक्तओं ने मेरे प्रति बहुत उदार शब्द प्रस्तुत किये और मुझे तो नहीं लगता कि मैं उन शब्दों का अधिकारी हूं जो उन्होंने मेरे प्रति प्रयोग किए हैं। जब मेरा ऐसा परिचय दिया जाता है तो मुझे एक बहुत सटीक बात याद आ जाती है। इन्हें चार पंक्तियों में कहने की अनुमति चाहता हूं। क्योंकि शब्द भी अगर सीमित हो जाए तो किसी और के शब्दों का प्रयोग करने में हानि नहीं है। कहा है कि :

जलता तो है रोगन बाति, कहते हैं दीपक जलता है।
करता तो है काम कोई पर नाम और का चलता है।

काम और नाम में यह अंतर होता है। मैं आज जो कुछ हूं आपका अपना हूं। ईश्वर की कृपा, बुजुर्गों का आशीर्वाद और मैं तो हमेशा कहता हूं कि ईश्वर की कृपा पृथ्वी पर, मनुष्य पर बरसती जरूर है किंतु किसी न किसी माध्यम की तलाश हमें करनी है। सर्वोत्तम माध्यम होते हैं माता–पिता और उनका वंदन करने से ईश्वर की अनुकम्पा की वर्षा सहज होती है और इसीलिए मैं किसी सम्मान का अधिकारी स्वयं को न मानते हुए जब भी कभी मेरा सम्मान होता है तो मैं मानता हूं कि मेरे माध्यम से ईश्वर के कृतित्व का सम्मान हो रहा है और बहुत विनम्रतापूर्वक अपने नेत्र बंद करते हुए ईश्वर का स्मरण करता हूं और आचार्य सुधांशुजी महाराज का एक बहुत प्रिय भजन है जिसे वे अक्सर गाते हैं उसकी चार पंक्तियां मैं मन नही मन ही मन दोहराता हूं। आपके साथ बांटना चाहता हूं मैं जो कुछ हूं क्यों हूं, कैसे हूं किसने मुझे बनाया। कहा है कि :

मुझे रास आ गया है तेरे दर पे सर झुकाना
तुझे मिल गया पुजारी मुझे मिल गया ठिकाना

मुझे कौन जानता था तेरी बंदगी से पहले

तेरी याद ने बना दी मेरी जिंदगी फसाना

मैं ईश्वर की स्तुति करता हूं और आप मेरा जीवन चरित्र मेरे सामने सुना देते हैं। इसलिए मैं आपके माध्यम से परमपिता परमेश्वर का आभार ज्ञापित करता हूं।

बहुत अच्छी बात आदरणीय श्री मरदा साहब ने कही कि ईचलकरंजी कदाचित् एक ऐसा शहर है जिसके नाम में स्वप्रकट जी लगा हुआ है अर्थात् इस शहर का नाम जब भी लेना हो तो आदर के साथ ही लिया जा सकता है। इससे अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है। मैं यहां से वापिस जाऊँगा और मुझसे लोग पूछेंगे कि आप कहां गए थे तो मैं ये तो नहीं कह सकता कि मैं ईचलकरन गया था, मुझे तो कहना पड़ेगा कि मैं ईचलकरंजी गया था। और यहां तो मैंने अपनी बेटी दी है। डॉ. मरदा साहब श्रीमती मरदा इन्होंने मेरी बेटी को अपनी बेटी के रूप में स्वीकार किया है। मेरे लिए तो यदि इस नगर के नाम में जी नहीं लगा होता तो भी मुझे इस नगर के नाम को जी लगा कर कहना पडता। मै तो कहूंगा कि मेरे लिए ईचलकरंजी सिर्फ ईचलकरंजी नहीं है बल्कि ईचलकरंजीजी है। ये नगर वास्तव में स्तुत्य है। आप लोग सब व्यापारी हैं। श्री मरदाजी ने बहुत अच्छा उदाहरण दिया कि यहां तो हम ताना बाना बुनकर कपड़ा बनाते हैं। हम लोग एक दूसरे से ऐसे जुड़े हुए रहते हैं जैसे ताना बाना में जुड़कर कपड़ा मिलकर एक हो जाता है। ताने बाने का अस्तित्व खत्म हो जाता है और कपड़े का अस्तित्व ही शेष रहा जाता है। आप लोग export business भी करते हैं। भारत से बाहर विदेशों में माल भेजने का। जब विदेशों में माल भेजा जाता है या अपने भी व्यापार में कभी देखा जाता है। यूं समझिए कि गेहूं की बोरी या दाल की बोरी सामने रखी हो और खरीदने से पहले परखना हो तो हम कैसे परखते है। पूरी बोरी का दाना तो नहीं देखा जाता। हम क्या करते हैं कि मुट्ठी भर लेते हैं या एक दो दाने उठा लेते हैं और देखते हैं कि एक दो दाने अच्छे हैं तो पूरी बोरी का माल बहुत अच्छा है ऐसा हम मान लेते हैं। मैंने भी यहां आकर ईचलकरंजी का मूल्यांकन केवल एक दो दाने परखकर ही कर किया। मेरी सबसे पहली मुलाक़ात डॉ. मरदा साहब से हुई है और डॉ. मरदा साहब को मैं ईचलकरंजी की बोरी में भरा हुआ एक दाना मानता हूं। हर व्यक्ति मुझे डॉ. मर्दा साहब जैसे लगते हैं। मैं उनसे बहुत प्रभावित हूं और मैं उनका नाम लेकर केवल उनको प्रतीक के रूप में प्रयोग कर रहा हूं। मैं जो कुछ उनके प्रति कह रहा हूं वो आप सब पर भी लागू होता है। कितनी विलक्षण क्षमता है और कितनी विनम्रता है। मैं तो अपने मित्रों के बीच बैठता हूं तो उनका उदाहरण देता हूं। बहुत कुछ मैंने उनसे सीखा है और आगे भी सीखता रहूंगा। वे चिकित्सक हैं, लोगों का बहुत विश्वास है उनके प्रति। मैं कई बार देखता हूं कि वे दिल्ली आते हैं तो उनके टेलीफोन आने शुरू हो जाते हैं कि मुझे बुखार हो गया, मुझे जुखाम हो गया, मेरा पेट ठीक नहीं है। वे टेलीफोन पर दवा बताते हैं तो उनका रोगी ईचलकरंजी से ये कहता है कि डॉ. साहब आपने टेलीफोन पर दवा बतायी है फिलहाल मैं वो लूंगा और जब तक आप

लौटकर नहीं आएंगे तब तक मैं और कोई इलाज नहीं लूंगा। इतना विश्वास है यहां के लोगों को उनके प्रति एक चिकित्सक के रूप में है। अब देखिए जिसके पास कुछ है उसके पास बैठिए तो कुछ न कुछ तो मिल ही जाता है। मैं भी वैसे सवेरे जल्दी उठता हूं और अपने काम करता हूं, प्रातःक्रिया करने में कभी कभी विलम्ब हो जाता है। एक दिन वे मेरे अतिथि हुए। घर पर ठहरे थे। मैं सुबह छः बजे बिना नहाए और आवश्यक कार्यों से निवृत हुए बगैर भी एक कप चाय लेता हूं। एक कप चाय लेने लगा तो देखा कि डॉ. साहब तो नहा धोकर चले आए तैयार होकर दिन भर के लिए और आकर टी.वी. के आगे बैठ गए। टी.वी. का स्विच ऑन किया तो मैंने उनके लिए भी चाय तैयार की। हम दोनों बैठकर चाय लेने लगे तो उन्होंने मुझे बताया कि टी.वी. पर सुबह छः बजे से लेकर आठ बजे तक सत्संग के कार्यक्रम आते हैं। मुझे कभी सवेरे टी.वी. देखने की आदत नहीं थी किंतु डॉ. साहब ने जब से मुझे बताया तब से यह मेरे दिनचर्या का आवश्यक क्रम बन गया है कि मैं प्रातःकाल चाहे सोनी हो, चाहे संस्कार हो या आस्था हो किसी न किसी चैनल पर कुछ न कुछ अच्छे संतों के प्रवचन सुनता रहता हूं और इसकी प्रेरणा मुझे डॉ. साहब से मिली मै इसके लिए आप सबके सामने उनका आभार ज्ञापित करता हूं।

मै आप सबका इसलिए और भी आभार ज्ञापित करना चाहता हूं कि इस योग्य न होते हुए भी आपने मुझे मंच पर आसीन किया और जो मुझसे योग्य और प्रतिभा संपन्न व्यक्ति हैं वे मेरे सामने इस सभा सभाकक्ष में हैं और ऊँचाई की तुलना में देखा जाए तो वे मुझसे नीचे बैठे हुए हैं। ये आप सबकी सामूहिक विनम्रता की पराकाष्ठा है। एक प्रसंग याद आ गया और इसी प्रसंग से मैं आज अपनी बात आपके समक्ष प्रारंभ करता हूं। एक उद्यान में बहुत से पुष्प लगे हुए थे। एक मदार का पुष्प और चांदनी की नन्ही नन्ही कलियां एक वृक्ष पर बहुत संख्या में थे। मदार का पुष्प अकेला पौधे में लगा हुआ अपने रूप और अपने आकार पर गर्व की अनुभूति कर रहा था और चांदनी की नन्ही नन्ही कलियां एक ही पौधे में अनेक संख्या में लगी हुई बहुत लज्जा के भाव के साथ केवल मुस्कुरा रही थीं और अपनी मादक गंध बिखेर रही थीं। थोडी देर में माली वहां पर आया मदार के पुष्प की ओर उसने देखा भी नहीं, उसने देखा भी होगा तो उपेक्षा से। वह सीधा चांदनी के पौधे के पास पहुंचा। उसने कलियों की मुस्कान और उनकी बिखरती मादक गंद का आमंत्रण स्वीकार किया। नन्ही नन्ही कलियों को चुन लिया, उसकी माला बनाई और उस माला को उस उद्यान के सामने एक भगवान का मंदिर था उस मंदिर में आसीन देव मूर्ति के गले में चढा दिया। अब बारी मदार के पुष्प की थी। उसने जब ये देखा कि नन्हीं नन्हीं कलियां जिसकी ओर वह व्यंग्य के भाव से कुछ चिंतन कर रहा था, वे तो प्रभु के गले का हार बनी हुई हैं और मदार का पुष्प आज भी उद्यान के कोने में उपेक्षित पड़ा हुआ है तो उसका मन हुआ कि उन कलियों से कुछ संवाद करूं। उसने कलियों से पूछा – भगवान की माला बनने की ये सफलता और यश तुमने अर्जित की है, इसका रहस्य क्या है? उन कलियों ने कहा कि हमें तो नहीं मालूम, लेकिन परमेश्वर की ये हमारे ऊपर कृपा है जो माली के माध्यम से हमारे

ऊपर बरसती है और माली परमेश्वर की आज्ञा का पालन करते हुए हमें चुनता है तथा परमेश्वर की सेवा में प्रस्तुत कर देता है। किंतु एक बात हम कह सकते हैं वो यह कि एक तो हममें सहकार की भावना है। न हम किसी से ईर्ष्या करते हैं न ही किसी की निंदा करते हैं। जो हमें प्रेम से चुनता है उसके हाथों में हम सहज भाव से चले जाते हैं। हम ये प्रश्न नहीं पूछते कि हमें कहां ले जाया जा रहा है? मदार के पुष्प को लगा कि कलियों की इस बात में कोई गंभीर रहस्य छुपा हुआ है। किंतु ये तो वो सारी बातें बता रही हैं जो अच्छी अच्छी हैं। मदार का अहंकार गया नहीं था, उसने पूछा कि आप में कोई कमी भी है? कोई न्यूनता है? कलियों ने कहा हां है और वो ये है कि हमारे मन के किसी कोने में स्वार्थ का भाव छिपा रहता है। किंतु हमारा पालनहार माली जब हमें चुनता है तो हमारे स्वार्थ के इस भाव को सुईं की नोंक से कुरेदकर वो बाहर निकाल देता है और हम सबको प्रेम के सूत्र में पिरो देता है इसलिए हम भगवान के गले की शोभा बनने के लिए तैयार हो जाती हैं। ये सहकार की भावना और मन के किसी कोने में यदि कोई ऐसी बात दबी छुपी पड़ी हुई हो तो उसे तिरोहित कर देने के लिए तत्पर रहना ये है ईचलकरंजी के आप जैसे महानुभावों की वृत्ति। और इसी सहकार का प्रतीक है कि इतनी बडी संख्या में आप सब लोग यहां उपस्थित हैं और सिर्फ मुझे यह प्रेरणा देने के लिए, मुझे संबल देने के लिए अपने सामने मुझे मंच पर आसीन कर मुझे इस प्रकार अत्यंत उदार शब्दों संबोधित कर रहे हैं। जैसा कि आज आपने किया है।

मेरी एक छोटी सी बात आप उसे स्वार्थ कहिए या कहिए कि कुछ ऐसी बात मेरे मन में छा गई है मुझसे उसे कहे बिना रहा नहीं जाता। मैने आज प्रातःकाल डॉ. साहब के निवास स्थान पर उनकी पूज्य माताजी के दर्शन भी किए और प्रणाम किया और उन्होंने आशीर्वाद दिया। मुझे बताया गया कि दादी जी यानि डॉ. साहब की माताजी जिस समय ईचलकरंजी में आईं थीं उस समय यहां पर पर्दा प्रथा चलती थी और एक विशेष प्रकार की रंगीन साड़ी जो केवल घुटनों तक आती थी यहां कि महिलाएं पहना करती थीं। हर प्रदेश या देश का अपना अपना पहनावा होता है। दादीजी को ये कुछ जचा नहीं तो उन्होंने ईचलकरंजी में आकर साहस के साथ उस ज़माने की बात आप सोचिए इस बात की शुरुवाद की कि सफेद साड़ी पहनेंगी और पूरी पहनेंगी। धीरे धीरे जैसे उन्होंने ऐसी साड़ी पहनना शुरू किया तो यहां के सारी महिलाओं ने भी उसी तरह पहनना शुरू कर दिया था। मुझे उनकी इस बात पर इतिहास के पर्दे के पीछे छुपी एक छोटी सी घटना का स्मरण हुआ जिसका मैं आपके सामने ज़िक्र करना चाहता हूं। तुलसीदासजी से तो आप सब परिचित हैं ही। मुझे आपको परिचित कराने की आवश्यकता नहीं है। उनकी माताजी का नाम था तुलसी। तुलसी और रहीम समकालीन थे। एक ही समय पर भारतवर्ष की भूमि पर रहे। एक बार ब्राïïण दंपत्ति को अपनी पुत्री का विवाह करना था। ब्राïïण चिंतित था कि पुत्री के हाथ पीले कैसे करूँ? चिंता में धीरे धीरे ढल रहा था। पत्नी ने आग्रह किया कि तुलसीदासजी का नाम मैंने बहुत सुना है, तुम तुलसी के पास जाओ, वे ज़रूर तुम्हारी मदद करेंगे। पत्नी की प्रेरणा से वह गरीब ब्राïïण तुलसी के पास पहुंचा उनके

सामने अपनी व्यथा कथा प्रस्तुत की। तुलसी तो स्वयं सरस्वती के अराधक थे। लक्ष्मी से उनका दूर का भी संबंध नहीं, वे उस गरीब ब्राïïण की क्या मदद करते। किंतु सरस्वती ने उन्हें प्रेरणा दी। उन्होंने उस गरीब ब्राïïण को अब्दुलरहीमखानखाना के पास भेजा और एक पुर्जा लिखा और उस पुर्जे पर लिखकर उस गरीब ब्राïïण को दिया। उस पुर्जे में लिखा– 'सुरदीय, नरदीय, नारदीय ये चाहत सब होय।' चाहे देवता की पत्नी हो, पृथ्वी पर रहने वाले हम मानव की पत्नी हो, चाहे पाताल लोक में रहने वाले नाग की पत्नी हो, अर्थात् तीनों लोकों में माता पिता की सबसे बड़ी चिंता होती है कि मेरी पुत्री का विवाह किसी योग्य वर से हो जाए। उन्होंने यह संकेत दिया। अब्दुलरहीमखानखाना ने उस गरीब ब्राïïण की बात सुनी। उसे यथा शक्ति इतना दान दिया कि उसकी पुत्री का विवाह हो जाए। और उस पुर्जे पर दूसरी पंक्ति लिखकर वह पुर्जा वापस उस गरीब ब्राहमण के हाथ में सौंप दिया और कहा कि यह तुलसीदासजी को दे देना। उन्होंने लिखा – 'सुरदीय, नरदीय, नारदीय ये चाहत सब होय, गोद लिए हुलसी फिरै तुलसी सो सुत होय।' माता तुलसी जब तुलसी को देखती हैं जिसने रामचरित्मानस की रचना की और जिसने एक पंक्ति लिखकर गरीब ब्राïïण की समस्या का समाधान कर दिया उसके लिए अब्दुलरहीमखाना ने लिखा कि माता तुलसी मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं कि भारत भूमि पर प्रत्येक माता ऐसी हो जो तुलसी जैसे पुत्र को जन्म दे और जब तुलसी का कृतित्व परिपक्व होकर दिखे, दृष्टिगत हो तो हुलसी इस बात का आनन्द अनुभव करे कि यह तुलसी वही है जिसे कभी मैंने गोद में खिलाया था। यहां पर उपस्थित आदरणीय माताओं से इस छोटी सी घटना के माध्यम से मैं यह अनुरोध करना चाहता हूं कि आज का समय आप सबके सामने एक चुनौती के रूप में प्रस्तुत है।

समाचार पत्र प्रत्येक प्रातःकाल प्रत्येक घर में आता है। अच्छे से अच्छा समाचार पत्र जो 150–200 वर्ष से निकल रहा है, जिसकी सम्पूर्ण भारत में प्रतिष्ठा है। उसमें कुछ सप्लीमेंट लगकर आते हैं उदाहरण के लिए मैं नाम ले लेता हूं आपके सामने। नवभारत टाइम्स के साथ सप्लीमेंट आता है दिल्ली टाइम्स। इंडियन एक्सप्रेस के साथ आता है दिल्ली एक्सप्रेस। ऐसे ही हर समाचार पत्र के साथ आता है। आप यकीन मानिए, आप यकीन क्या मानेंगे आप भी इसे देखकर विश्वास करेंगे, मैंने अपने घर में इस बात का क्रम बना रखा है कि समाचार पत्र सबसे पहले मेरे हाथ में आएगा और जैसे ही मेरे हाथ में आता है उसके सप्लीमेंट और कुछ पृष्ठ उस समाचार पत्र से अलग करके पहले रद्दी में डलवा देता हूं तब उस समाचार पत्र को घर में प्रवेश देने की अनुमति देता हूं। भारतीय कन्याओं की हमारा देश पूजा करता है। जिस पिता ने उस कन्या को जन्म दिया वह भी उसका चरण वंदन करता है और उसे विदा करने के पूर्व उसके चरणों का स्पर्श करता है। जिस भारत में कन्याओं की पूजा देवी के रूप में होती है उस भारत में आज उन्हीं कन्याओं के ऐसे चित्र देखने को मिलते हैं कि देखकर आंखें बंद कर लेनी पड़ती हैं। भारत का भविष्य क्या

है? इसकी चिंता हमें करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विश्व भर में जिस प्रकार की प्रगति हो रही है आधुनीकीकरण, वैश्वीकरण और दूर संचार तकनीकि की प्रगति विश्व के हाथों सुरक्षित है। किन्तु मुझे यह चिंता ग्रस रही है भारत का भविष्य तो उज्जवल है, किंतु भारत की संस्कृति का क्या होगा? ये संस्कृति जो कभी अनुकृति की मोहताज हुआ करती थी आज विकृति का रूप ले रही है। और किसी दिन अपकृति का रूप ले लेगी। भारतवर्ष की ये संस्कृति सुरक्षित रहे, हमारे परिवार के बालक बालिकाएं जब युवा युवतियां होंगे तब उन्हें इस बात का स्मरण रहे कि वे उनके देश के बालक और बालिकाएं हैं। उनके चरित्र को सुदृढ़ करने की, उनके परिवेश को संस्कारित करने की ज़िम्मेदारी हमारे देश की, हमारे प्रदेश की माताओं पर है। मैंने सूरत में जो कुछ कहा था। एक जिज्ञासा मेरे पास आयी थी। उसमें कहा कि क्या आप लड़कियों के घर से बाहर काम करने के विरोधी हैं? मैंने कहा मैंने ऐसा कभी नहीं कहा, आपको ग़लतफहमी हुई है। मैं कन्याओं की प्रतिभा का पूरा पूरा उपयोग हो इसका विरोधी नहीं हूं। वे खूब पढ़े–लिखें। आप कोई भी स्कूल या कॉलेज का रिज़ल्ट देख लीजिए उसकी जो मेरिट लिस्ट होती है उसमें लड़कियों का नाम सबसे Tपर होता है। अभी–अभी हायर सैकेंडरी का रिज़ल्ट आया है उसमें दस की मेरिट लिस्ट में छः लड़कियां हैं। यह प्रतिभा विकसित नहीं हो ऐसा मेरा उÍsश्य नहीं है। यदि वे उद्योग व्यापार चला सकती हैं तो अवश्य चलाएं। वे प्रशासनिक अधिकारी बनना चाहती हैं ज़रूर बनें। इससे मेरा रंच मात्र विरोध नहीं है किन्तु मेरी उनसे करबद्ध प्रार्थना है कि हमारे सांस्कृतिक मूल्यों से समझौता मत कीजिए। आप कितने भी उच्च पद पर आसीन हों, कितना भी बड़ा आपका व्यवसाय हो हम आपका अभिनन्दन करेंगे किन्तु आप भारतीय नारी बनी रहिए। विदेशी बाला मत बनिए।

अक्सर एक प्रश्न होता है कि हम जीवन में प्रगति कैसे कर सकते हैं। आज मैं भारत का मुख्य न्यायाधीश हूं। एक बहुत छोटे स्थान और एक साधारण परिवार में जन्म लेकर वहां तक पहुंच गया। कई लोग भ्रमवत या मेरे प्रेम के वशीभूत उसे मेरी उपलब्धि मानते हैं तो मुझसे एक प्रश्न पूछ लेते हैं कि आप अपनी सफलता का रहस्य बताइए। हम भी चाहते हैं कि हमारे समाज के युवक–युवतियां उनका अनुकरण करें और जैसे आप सफलता के शिखर पर पहुंचे हैं वे भी पहुंचे। आदरणीय सज्जनवृंद और आदरणीय माताओं! मेरी सफलता का यदि कोई रहस्य है तो उस पर मेरा कोई कॉपी राइट नहीं है कि मैं किसी को बताÏगा नहीं। मैं तो जो कुछ हूं जैसा अंदर हूं वैसा बाहर हूं। मेरा जीवन एक खुली किताब है, मेरा कोई गोपनीय रहस्य नहीं है। जो पढ़ना चाहे पढ़ सकता है। किन्तु जब ये प्रश्न मुझसे पूछे जाते हैं तो मैं इसका उत्तर एक दूसरे रूप में देता हूं। जीवन में श्रेष्ठता का आयोजन किस प्रकार किया जा सकता है। रामचरित्मानस का एक प्रसंग है इसे मैं आपके सामने इसलिए पढ़ रहा हूं कि यदि कि किसी ने इसे न भी पढ़ा हो तो आपके सामने इसकी चर्चा हो जाए। राम रावण युद्ध प्रारंभ होने वाला था। विभीषण बहुत चिन्तित थे।

उन्होंने भगवान राम को देखा और भगवान राम की अनुमति लेकर अपने मन में जो शंका थी उसकी प्रस्तुति भगवान राम के समक्ष की। उन्होंने कहा–

'नाथ न रथ नहीं तन पद त्राना, केहि विधि जितव दीन बलवाना। '

प्रभु आपके आपके पास न तो रथ है, न आपके पास कवच है, न ही आपके पैरों में जूतियां हैं। इस महाबली रावण के साथ आप कैसे संघर्ष करेंगे। इसके पास तो वायु मार्ग से यात्रा करने वाला वायु रथ भी है। इससे आप कैसे विजयी होंगे। विभीषण की जिज्ञासा भगवान राम समझ गए। उन्होंने जो उत्तर दिया वही आज के इस कार्यक्रम का मर्म है जिसे मैं रामचरित्मानस से **उद्धत** करते हुए आपके सामने प्रस्तुत करता हूं। भगवान राम ने कहा–

सौ रज धीरज तेइ रथ चाका, सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।

बल विवेक अरू परहित घोरे, छमा, कृपा, समता रजु तोरे।।

उन्होंने कहा कि मेरे पास वह रथ है जिसमें शौर्य और धैर्य रूपी पहिए हैं। सत्य शील इसके ध्वज पताका हैं। आत्मविवेक और आत्मबल और परोपकार करने का भाव इस रथ के घोड़े हैं और इन घोड़ों को रथ से जोड़ा गया है क्षमा, दया और समता की डोरी से। यही युद्ध में विजय पाने का रहस्य है। अब भगवान राम ने कहा कि जो व्यक्ति जीवन के संघर्ष में विजयी होना चाहता है उसे भी इस रथ पर आरोह होना होता है और यदि वह इस रथ पर आरोह हो सकता है तो जीवन के संग्राम में भी विजयी हो सकता है। शौर्य और धैर्य, सत्य और शील आत्मबल, आत्मविवेक, परोपकार का भाव। क्षमा, दया और प्रतिकूल परिस्थितियों में समता का भाव। चाहे सुख का समय हो, दुःख का समय हो चाहे संघर्ष का समय हो, शांति का समय है। व्यक्ति अपना भाव सम बना कर रखे। इन सूत्रों की व्याख्या कई दिनों तक, कई महीनों तक की जा सकती है इसलिए इस दिशा में मैं रंच मात्र भी प्रयास नहीं करूंगा। एक छोटी सी कहानी कह कर मैं आज का अपना वक्तव्य समाप्त करूंगा।

कबीर मेरे प्रिय संत कवि हैं। तुलसी के बाद यदि दूसरा स्थान किसी का है तो वह कबीर का है। कबीर के पास मेरे जैसा एक जिज्ञासु पहुंचा और कबीर से उसने कहा कि मेरा मन कभी सन्यस्थ होने का करता है और कभी गृहस्थ होने का करता है और इस द्वय के भाव में मैं चिन्तित हो जाता हूं। मुझे समझ नहीं आता कि जीवन का संपूर्ण उपयोग करने के लिए गृहस्थ होना उचित है अथवा सन्यास लेना। कबीर ने कहा बैठो अभी उत्तर देता हूं। कबीर के पुत्र का नाम था कमाल और पुत्री का नाम था कमाली। जैसी पुरानी परंपरा रही है पत्नी का नाम नहीं लेते उसे प्रतीक के माध्यम से बुलाया जाता है। कबीर ने ज़ोर से आवाज दी कमाल की मां बहुत अंधेरा है कपड़ा बुनने के लिए रोशनी चाहिए एक दीपक ले आओ। दिन के 12 बजे का समय था। जैसे ही कबीर ने यह कहा है उनकी धर्मपत्नी घर के अन्दर थीं उन्होंने दीपक प्रज्जवलित किया और दीपक उनके सामने रख दिया। उन्होंने यह नहीं पूछा कि दिन के 12 बजे जबकि सूर्य की

रोशनी वृहत्तम है। आपको कैसे लग रहा है कि अंधकार है और दीपक की आवश्यकता है। जिज्ञासु गंभीरता के साथ इस दृश्य को देख रहा है। कबीर खड़े हुए, उस जिज्ञासु का हाथ पकड़ा और एक पहाड़ी पर ले गए। वहां एक संत ध्यान की मुद्रा में बैठे हुए थे। कबीर ने उनका दर्शन किया और प्रणाम किया और जिज्ञासु से संत का दर्शन और प्रणाम करने को कहा। दर्शन और प्रणाम की औपचारिकता समाप्त हुई। संत ध्यानस्थ थे। उनके ध्यान में विघ्न डालना गंभीर अपराध होते हुए भी और पता नहीं संत की प्रतिक्रिया क्या होगी यह जानते हुए भी कबीर ने उनसे कहा कि महाराज एक व्यक्ति मेरे साथ आया हैं जानना चाहता है कि आपकी आयु क्या है? नेत्र खोले और संक्षिप्त उत्तर दिया कहा, 90 वर्ष और पुनः आंखे बंद कर ली। कबीर और वह जिज्ञासु पहाड़ी से लगभग 50 फुट ही नीचे उतरे होंगे। कबीर ने फिर ज़ोर से आवाज़ लगाई और कहा कि महाराज आपकी आयु क्या है? संत ध्यान से विचलित हुए और कहा, बंधु, मैंने अभी थोड़ी देर पहले ही कहा था 90 वर्ष। वे दोनों फिर नीचे उतरे लगभग आधी T'चाई तक नीचे उतर आए थे कि कबीर ने फिर ज़ोर से आवाज़ लगाई महाराज आपकी आयु क्या है? संत ने कहा– मित्र, तुम बार बार भूल जाते हो। अभी तो मैंने बताया था कि मेरी आयु नब्बे वर्ष है। और अभी तो तुम्हें यहां से गए हुए कुछ क्षण ही हुए हैं। मेरी आयु इतनी देर में बढ़ी नहीं है 90 वर्ष ही है। संत फिर ध्यानस्थ हो गए। कबीर उस जिज्ञासु के साथ घर लौट कर आए और कहा कि तुम्हें उत्तर मिल गया। उसने कहा मैं समझा नहीं। कबीर ने कहा, मैं समझाता हूं। कबीर ने कहा कि यदि गृहस्थ बनना है तो ऐसे गृहस्थ बनो कि जिसके साथ गृहस्थी रचाओ उस पर पूरा–पूरा विश्वास रखो। आत्मियता और परस्पर विश्वास का इतना प्रगाढ़ संबंध हो एक दूसरे के प्रति कि दिन के 12 बजे जब सूर्य अपनी प्रखर रोशनी प्रसारित कर रहा है उस समय मैंने अपनी पत्नी से कहा कि अंधकार है मुझे दीपक की आवश्यकता है तो उसने मेरे प्रश्न पर कोई शंका व्यक्त नहीं की। क्षमा कीजिए, आज का समय होता तो पत्नी दीपक नहीं लाती और उस जिज्ञासु से आकर कहती कि देखा, सठिया गए हैं दिन में दीया मांग रहे हैं। दूसरी बात, यदि सन्यस्थ होना है तो मानव के मन और शरीर के जितने विकार होते हैं उस पर विजय पाना अनिवार्य है। उन संत को देखो मैंने तो उनका केवल एक गुण दिखाया है कि उन्होंने अपने क्रोध पर विजय पा ली है।

..... वो कहते थे कि मेरा प्रत्येक ग्राहक ईश्वर का अवतार है। वो जब मुझे जूता बनाने और मरम्मत करने का आदेश देता है तो मैं निःसन्देह अपने जीवन निर्वाह के लिए उचित सेवा का मूल्य तो उनसे लेता हूं किन्तु मेरा प्रयास यह रहता है कि जब मैं जूता गठू तो ऐसा गठू कि जैसा पहले किसी ने बनाया न हो" और मरम्मत करूं तो ऐसी करूं कि जैसे पहले कभी किसी ने की न हो ताकि ईश्वर के रूप में यह व्यक्ति जो ग्राहक के रूप में आया है उसकी सेवा कर सकूं और अपने कर्म की संपूर्ण श्रेष्ठता के साथ संपादन करते हुए इसकी सेवा कर सकूं।

आदरणीय महानुभावों जो मेरे हमउम्र और मुझसे छोटी उम्र के लोग हैं उनको बस यही कहना चाहता हूं कि जो भी करो श्रेष्ठता के साथ करो। और यदि इस छोटे से सूत्र को अंगीकार कर लिया तो यह हमारा स्वभाव बन जाएगा कि प्रातःकाल से संध्या तक इस श्रेष्ठता के सूत्र का अनुवाद अपने जीवन की दैनन्दिन क्रियाओं में कर सकते हैं तो हम श्रेष्ठता के चरम सीमा तक पहुंच सकते हैं।

और अंतिम बात कि माता–पिता के ऋण से कभी कोई उऋण नहीं हो सकता। इसलिए उनका कभी अनादर मत कीजिए। उनके प्रति कभी अशिष्ट भाषा और अपने क्रोध का प्रदर्शन अपने माता–पिता के सामने कभी मत कीजिए। ये मानिए कि आप जो कुछ हैं उन्हीं के आशीर्वाद से हैं।

हरीसिंह नलवा का नाम आपने सुना होगा। एक शूरवीर योद्धा और एक शासक। युवावस्था को प्राप्त हुआ। अपने साम्राज्य को बढ़ाने की आकांक्षा से उसने अपने पड़ोसी शासकों के साथ युद्ध छेड़ा और उसमें विजयी हुआ। विजय प्राप्त कर अपने महल में अपनी माता के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और उनसे कहा, मां, मैं युद्ध में विजयी होकर लौटा हूं। मां उस समय कपड़े धो रही थी। हाथ में गीला वस्त्र था। वही गीला वस्त्र उन्होंने हरीसिंह नलवा की ओर फेंक दिया और कहा तू ज़रा बैठ मैं अपने हाथ का काम खत्म कर लूं फिर तुमसे बात करूंगी। हरीसिंह नलवा चाहे सम्राट हो गया हो किन्तु माता तो माता होती है और सम्राट भी माता के लिए पुत्र ही होता है। उसने कहा तू प्रतीक्षा कर मैं अभी आती हूं। हरीसिंह नलवा उस गीले आसन पर बैठ गया। कुछ देर उसने प्रतीक्षा की और कहा मां मैं सम्राट हूं और विजय प्राप्त करके लौटा हूं। आज मेरे पास इतनी शक्ति है। मैं आज तेरे उपकार का ऋण चुकाना चाहता हूं। मांग क्या मांगती है। मां ने उत्तर नहीं दिया। उसके ओठों पर एक मुस्कान खिल गई। हाथ का काम पूरा नहीं हुआ था। कुछ देर लगने लगी गई। हरीसिंह नलवा को क्रोध आ गया। मैं सम्राट हूं और युद्ध को विजय करके लौटा हूं और इस मां ने एक गीला वस्त्र मुझे बैठने के लिए दे दिया। इस गीले वस्त्र पर मैं कितनी देर बैठा रहूंगा। क्या सम्राट एक गीले वस्त्र पर बैठता है। वह तो सिंहासन पर बैठता है। क्रोध उसने व्यक्त किया। मां से कहा, मां कितनी देर तक मुझे इस गीले कपड़े पर बिठा कर रखोगी। मैं युद्ध में विजय प्राप्त कर सबसे पहले आपके पास आपके दर्शन करने के लिए आया हूं और आपके पास मेरे लिए समय नहीं है। हरीसिंह नलवा के क्रोध का मां पर कोई अन्तर नहीं पड़ा। मां ने कहा, जाने दे रे। तुझे पता है कि कितने महीनों तक तेरे गीले वस्त्रों पर सोई हूं और आज एक क्षण तू मेरे गीले फेंके हुए कपड़े पर नहीं बैठ सकता। जा तू अपना राज्य संभाल। तू मां का ऋण नहीं उतार सकता लेकिन फिर भी मैं तुझे आशीष देती हूं कि अगले युद्ध में तू फिर विजयी होकर लौटेगा। ये मां होती है और हमें पुत्र का भाव मां और पिता के प्रति रखना चाहिए। उन्हीं के आशीष और ईश्वर की कृपा से ही जीवन में सफलता प्राप्त होती है।

आदरणीय सज्जनवृंद मैं आपका बहुत–बहुत आभारी हूं। मैंने आज जो विचार आपके सामने रखें हैं वे न तो कोई उपदेश हैं और न ही कोई प्रवचन हैं। मैं जैसा सोचता हूं। मेरे मन में जैसे विचार आते हैं मैंने इस भाव से उन्हें आपके सामने प्रस्तुत किया है कि मैं आपका हूं, आपके परिवार का एक सदस्य हूं कदाचित् मैंने कोई त्रुटि की हो तो आप मुझे क्षमा करेंगे। एक बात स्मरण हो आई है सोचता हूं कह ही दूं। एक पौधे में पुष्प लगे हुए थे और उसी के पास एक पत्थर भी पड़ा रहता था। जब फूल पक जाते थे तो किसी ने तोड़े न भी हों तो उस पत्थर पर गिर जाते थे। एक दिन पत्थर को क्रोध आ गया। उसने फूल से कहा, कि तुम्हारा जीवन क्या है और तुम्हारी शक्ति कितनी है। जब चाहे गिर कर मेरे सिर पर बैठ जाते हो। तुम्हें शर्म नहीं आती। और यदि किसी दिन मैंने तुम्हें कुचल दिया तब क्या होगा। पत्थर ने तो अपना क्रोध व्यक्त किया था किन्तु फूल पर इसकी जो प्रतिक्रया हुई वह अति महत्त्वपूर्ण है। फूल के नेत्र कृपा के भाव से उपकृत और सजल हो उठे। इस क्रोध की अभिव्यक्ति के लिए उस फूल ने उस पत्थर का आभार व्यक्त किया और कहा, मेरे मित्र, आप तो मेरे बुर्जुग हैं। मेरी क्षमता की तुलना आपकी क्षमता से हो ही नहीं सकती। किन्तु एक बात जानता हूं कि परमेश्वर ने मुझे पृथ्वी पर जन्म इसलिए दिया है कि मैं अपने अन्दर एक सुगंध का भाव जाग्रत करूं और इस गंध को जितनी दूर फैला सकता हूं फैलाT। मैं तो केवल इतना जानता हूं कि जिस दिन आपने मुझे कुचल कर पीस दिया उस दिन मेरी मादक गंध इतनी दूर तक जाएगी जितनी दूर तक इस पौधे पर लगने के दौरान कभी नहीं गई। जिस दिन मैं कुचल जाउंगा उस दिन मेरी गंध अधिकतम होगी और वहां तक पहुंच पाएगी जहां तक पहुंची नहीं थी। हमें इस बात का अनुभव करना चाहिए कि जो हमारे कर्त्तव्य हैं उनका संपादन करते हुए हमें जो भी प्रतिकार, जो प्रतिक्रियाएं मिलीं और जो भी प्रसाद मिले उसे हम ईश्वर की कृपा मानकर स्वीकार करेंगे।

मैं आपका आभारी हूं कि आपने मेरी बातें सुनी। यदि आप इन पर चिन्तन करेंगे तो मुझे बहुत प्रसन्नता की अनुभूति होगी। यदि आप अपने परिवार में, अपने समाज में जहां भी आप बैठते हैं, कुछ चिन्तन अच्छे विचारों पर करने का प्रयास करेंगे तो मैं समझता हूं कि हमारा समाज बहुत समर्थ हो सकेगा। क्षमता की कमी हमारे समाज में नहीं है। सूरत का उदाहरण आपके सामने है। एक मिनट के समय में करोड़ों रूपये एकत्रित हो गए और आश्चर्य करते हैं कि कैसे हो गया। पर एक घड़ी थी उस घड़ी में कुछ बात कही गई, कुछ बात मन को छू गई। क्षमता तो है वो केवल निकलने का मार्ग चाहती है निकल पड़ी और आज समाज के पास आज इतना पैसा है कि भारतवर्ष में इस माहेश्वरी समाज के लिए एक श्रेष्ठतम विद्यालय की स्थापना हमारा समाज कर सकता है। सूरत का उदाहरण का अनुकरण करते हुए मेरा एक संदेश और आपकी कृपा के लिए बहुत–बहुत आभार।

'वक्त का बेरहम इतिहास बदल सकते हो, पुण्य में पाप का आभास बदल सकते हो
अपनी बाहों पर भरोसा हो तुमको, धरती तो क्या आकाश बदल सकते हो।'

.....